पुस्तक समीक्षा

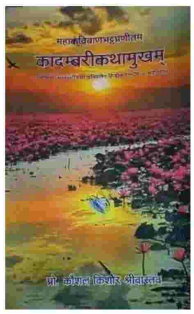

पुस्तक का नाम– महाकविबाणभट्टप्रणीतम् कादम्बरीकथामुखम् (उन्मेषिणी संस्कृत टीका के साथ हिन्दी रूपान्तरण से संवलित)

टीकाकार–प्रो. कौशल किशोर श्रीवास्तव (अधिष्ठाताचर इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज तथा विभागाध्यक्षचर पालि, प्राकृत एवं संस्कृत भाषा विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज)

प्रकाशन – शाश्वत प्रकाशन एवं शोध संस्थान, प्रयागराज

संस्करण– प्रथम 2022

पुस्तक में कुल पृष्ठों की संख्या– 270 पृष्ठ

"बाणो वाणी बभूव ह" राजशेखर की इस उक्ति को यथार्थ करने वाले गद्य सम्राट महाकवि बाणभट्ट–प्रणीत कादम्बरी नाम्नि रचना पर गुरुवर्य प्रोफेसर कौशल किशोर श्रीवास्तव कृत 'उन्मेषिणी' संस्कृत टीका जो भाषानुवाद के साथ प्रकाशित है, अपने अन्दर टीका के लक्षण को पूर्णरूप से समाहित करती है। "गद्यकवीनां निकषं वदन्ति" यह उक्ति संस्कृत– जगत में प्रसिद्ध है। पद्य में जहाँ भावों की सरिता का सरस कल्लोल होता है वहीं गद्य विधा निश्चित रूप से स्वयं में हार्दिक पक्ष के साथ बुद्धि के वैभव और श्रम को समाहित किये रहती है। महाकवि बाणभट्ट अपनी कादम्बरी रचना से ख्यातिलब्ध हैं, जो गद्यकाव्य अथवा कथा होने पर भी सर्वत्र बाणभट्ट के नाम के पूर्व 'गद्यसम्राट' के साथ–साथ 'महाकवि' पद की योजना करती है। यह महाकवि बाणभट्ट के वर्णन–कौशल के साथ–साथ उनके वर्णन चातुर्य का ही परिणाम है कि सहृदय पाठक को कादम्बरी में सहज ही रसानुभूति होती है तथा कादम्बरी के अध्ययन में निमग्न पाठक अपने समस्त जागतिक कार्यों को विस्मृत कर देता है। अतः विद्वन्मण्डली में यह उक्ति बहुप्रथित है कि 'कादम्बरी रसज्ञानां आहारोऽपि न रोचते'। अतः इस महनीय ग्रन्थ पर टीका करना विद्वानों के लिए एक दुरुह कार्य होने पर भी विद्वद्वर प्रोफेसर कौशल किशोर श्रीवास्तव जी के लिए मनोविनोद का साधन है। जो स्वभावतः नैक ग्रन्थों के स्वाधाय और चिन्तन में रत रहते हैं। प्रोफेसर श्रीवास्तव जी ने अपने अध्यापन काल में छात्रों को विविध शास्त्रों और ग्रन्थों का अध्यापन कराते हुए सेवानिवृत्त होकर अवकाश की अवधि में पर्याप्त अनुभव सम्पन्न होकर छात्रों के मार्ग को विन्ध्याटवी जैसे गहन विपिन में सुगम बनाने हेतु इस टीका का प्रणयन किया है जो उनके विद्याव्यसन के साथ–साथ उनकी सहृदयता और विद्यार्थियों के हित में उनकी तत्परता का परिचायक है। गुरुवर्य प्रो. श्रीवास्तव कृत सानुवाद उन्मेषिनी टीका की कुछ विशेषताएँ निम्न हैं–

ग्रन्थारम्भ में जहाँ महाकवि बाणभट्ट "अजाय... त्रिगुणात्मने नमः" कहकर सत्व, रज तथा तमोगुण से युक्त परमेश्वर को नमन करते हैं वहीं टीकाकार–

"मोहकल्मषहन्त्रीं च अमृतरसवर्षिणीम्।
बुद्धिदात्रीं जगध्दात्रीं शर्वाणीं नौमि सादरम्।।"

लिखकर त्रिगुणात्मक प्रपञ्च की आधारभूता पराम्बा को नमन करते हुए त्रिगुणात्मक जगत की सञ्चालिका जगन्माता के प्रति अपनी अगाध श्रध्दा और कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं। तत्पश्चात् परम्परानुसार कविस्तुति के साथ ग्रन्थ के वैशिष्ट्य वर्णन के अनन्तर "चित्तं हरति सर्वेषां एषा बाणकवेः कृतिः" यह पंक्ति लिखते हैं जो इस तथ्य की ओर संकेत करती है कि निश्चित रूप से महाकवि की यह कृति टीकाकार के मन को भी आकृष्ट कर चुकी है जिससे प्रेरित होकर वे इस श्रमसाध्य किन्तु स्वान्तःसुखप्रदाता कार्य में प्रवृत्त हुए हैं।

इसके अनन्तर दो श्लोकों में टीकाकार ने अपनी टीका का उद्देश्य प्रकट किया है जिनमें स्पष्ट होता है कि इस सरस ग्रन्थ के अर्थप्रकाशनार्थ, समस्त छात्रों के कल्याणार्थ तथा उनके हित की कामना से राष्ट्रभाषा का आलम्बन लेते हुए सानुवाद यह टीका प्रस्तुत है–

सरसायाः कृतेरस्याः अर्थप्रकाशनाय वै।

'उन्मेषिणी' नु टीकैषा तन्यते सादरं मया ।।
कल्याणार्थं समेषां तु छात्राणां हितकांक्षया ।
राष्ट्रभाषां हि आलम्ब्य अनुवादो विधीयते ।।

"बाणोच्छिष्टं जगत सर्वं" सूक्ति विद्वानों के मध्य सामान्येन स्वीकृत और प्रसिद्ध है जिसका शाब्दिक अर्थ है कि सम्पूर्ण संसार बाण द्वारा जूठा किया गया है अर्थात् बाणभट्ट ने कुछ भी नहीं छोड़ा है अपितु समस्त संसार के सकल ज्ञान–विज्ञान और विषयों को अपनी रचना में बाण ने समाहित कर लिया है। यह स्थिति महाभारत के सम्बन्ध में प्रसिद्ध उक्ति– **'यन्नेहास्ति न तत्क्वचित्'** के समान ही बाण की रचना की परिपक्वता और व्यापकता को व्याख्यायित करती है। ऐसे मनीषी कवि के भावों को यथार्थ रूप में समझकर उस पर टीका वही विद्वान, मनीषी कर सकता है शास्त्रों में जिसकी अपनी अबाध गति बाणभट्ट के समान हो। जो वेद, वेदाङ्ग, साहित्य, धर्मशास्त्र, कोश, दर्शन, के साथ–साथ वेदांगों में मुख रूप में स्वीकृत व्याकरण और वेद पुरुष के चक्षु रूप में मान्य ज्योतिषशास्त्र में निष्णात विद्वान हों।

कादम्बरी के लेखन में महाकवि बाणभट्ट की लेखनी तब तक विश्राम नहीं लेती जब तक वे कथ्य को पूरा व्यक्त नहीं कर लेते हैं। यही कारण है कि **'ओजः समास भूयस्तमेतदगद्यस्य जीवितम्'** महाकवि दण्डी की यह पंक्ति बाणभट्टकृत कादम्बरी में पूरी तरह चरितार्थ होती है। बाण का वर्णन–वैविध्य उनकी अपनी निजी विशेषता है जिसके साथ वर्ण्यविषय सम्बन्धित उनका अगाध पाण्डित्य मणिकाञ्चन संयोग है, जो पाठक को कथानक की गहनता में प्रवेश कराता है। महाकवि

बाणभट्ट का वर्ण्य–विषय अपरिमित होने से साथ–साथ शास्त्रों के वैविध्यज्ञान से असीमित भी है; यथा–रामायण, महाभारत, श्रीमद्भागवत महापुराण, स्कन्दपुराण, दर्शनशास्त्र, व्याकरण, ज्योतिष के उपाख्यानों तथा सम्बन्धित स्थानों पर इनके विषय विशेष के उल्लेख–द्वारा महाकवि बाणभट्ट ने जो कथा अथवा काव्य संसार सृजित किया है, टीकाकार ने अपने गहन अध्ययन और अपनी विलक्षण प्रज्ञा की परिणति 'उन्मेषिणी' टीका द्वारा उस काव्य–संसार को पाठकों हेतु प्रकाशित किया है। टीकाकार का विषय सम्बन्धी ज्ञान और अभिव्यक्ति–कौशल का उदाहरण द्रष्टव्य है–मङ्गलाचरण पर टीका करते हुए टीकाकार विभिन्न ग्रन्थों के उध्दरण, व्याकरणात्मक टिप्पणी, कोशादि का उध्दरण देते हुए बिना किसी खींचातानी के पाठकों के लिए कथा का भाव सहजबोध्य और रोचक बनाते हैं; उदाहरणार्थ– 'प्रलये' की पद की टीका में– **जगन्निरोधकाले तमः स्पृशतीति तमः स्पृक् तस्मै। स्पृशोऽनुदके क्विन्, इति तमस् स्पृश+क्विन्। तमोगुणान्विताय शङ्कराय संहारकर्त्रे शङ्कराय इति।** प्रलये गुर्वावरणकेन तमसा सर्वम् आव्रियते जगत्। जन्मनि स्थितौ प्रलये च अत्र 'निमित्तात्कर्म योगे' इति नैमित्तिकी सप्तमी वा। टीकाकार के द्वारा की गयी यह टीका उनके शास्त्र–परम्परा के निर्वाह,शास्त्रीयप्रतिबध्दता के साथ–साथ उनकी शास्त्रनिष्ठा की पूर्ण परिचायिका है। इसी प्रकार सर्गस्थितिनाशहेतवे पद पर टीका करते समय ब्रह्मसूत्र से लेकर उपनिषद् पर्यन्त उद्धरणों की माला प्रस्तुत कर देते हैं। विस्मय की बात यह है कि प्रथमतः वर्णन–वैविध्य से सुसज्जित कादम्बरी जैसा क्लिष्ट ग्रन्थ ततोपि वर्ण्य–विषय की स्पष्टता हेतु विविध शास्त्रों से ग्रहीत उध्दरणों से अलंकृता 'उन्मेषिणी' टीका सुधिय पाठकों के रसास्वाद में कहीं भी बाधक नहीं बनती अपितु शास्त्र का यथार्थ बोध कराती हुई यह 'उन्मेषिणी' टीका उनके अध्ययन सौकर्य में सहायिका होने के साथ गम्भीर,क्लिष्ट तथा शास्त्रगर्भित पदों के सरलीकरण में मार्गदर्शिका होती है, यथा सर्गस्थितिनाशहेतवे– सर्गः सृष्टिः स्थितिः– मर्यादा नाशश्च संहारः तेषां हेतवे कारणाय, "जन्माद्यस्य यतः (1/12) इति ब्रह्मसूत्रोक्ताय ब्राह्मणे। यतो वा इमामि भूतानि जायन्ते येन जातानि जीवन्ति यत्प्रत्ययन्त्यभिसंविशन्तीति तद् विजिज्ञासस्व तद्ब्रह्म इति तैत्तिरीयश्रुतिवर्णिते परमात्मने, इत्यर्थः।

इस प्रकार भावों की जीवन्तता को वर्तमान रखते हुए ज्ञान से परिपूर्ण प्रथम श्लोक के अन्यान्य पदों की व्याख्या भी द्रष्टव्य है– 'त्रिगुणात्मने' पद पर उन्मेषिणी टीका द्रष्टव्य है– त्रिगुणात्मने –त्रिगुणम् आत्मा स्वभावः यस्य तस्मै। 'आत्म जीवे धृतौ देहे स्वभावे परमात्मनि यत्ने' इति वैजयन्तीकोषः। त्रिगुणात्मकः अविवेकः जगत्कारणभूतः परमात्मनः स्वभावः। 'देवस्यैष स्वभावोऽयमाप्तकामस्य का स्पृहा' इति गौडपादीय कारिकासु प्रतिपादितम्। जगद्रचनास्थितिसंहारकाले निर्गुणोपि परमात्मा गुणस्वभावतां भजते इव। इति त्रिगुणस्वभावात्मके। त्रिगुणात्मने में वैजयन्ती कोश को उद्धृत करते हुए टीकाकार गौणपादीय कारिका का उद्धरण प्रस्तुत करते हैं। 'अजाय' पद की व्याख्या में बृहदारण्यकोपनिषद् का उद्धरण सहजतापूर्वक

उपस्थापित करते हैं–अजाय– न जायते इति अजः। 'स वा एष महानज आत्मा' इति वृहदारण्यके। "अजमानिद्रमद्वैतं बुद्धते तदा" इति माण्डूक्यकारिकासु तस्य अजत्वं गीयते। जन्मनिषेधेन मरणपर्यन्तमन्ये सर्वे निषिद्धाः अजाय इति। जन्मादिसर्वविक्रिया रहिते परमात्मने।

प्रथम श्लोक से कुछ पदों की टीका को उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत किया गया। अथाह ज्ञान के सागर को समाहित की हुई कादम्बरी पर 'उन्मेषिणी' टीका निश्चित रूप से इस ज्ञानार्णव को द्विगुणित करती है। टीकाकार की ईमानदारी के साथ–साथ उनके अध्ययन की गहनता और विद्यार्थियों के प्रति उनकी यह शुभेच्छा है कि यथास्थान वे वैजयन्तीकोश, हलायुधकोष, अमरकोष, तथा मेदिनी कोषादि को उद्धृत करते हुए ग्रन्थ के तात्पर्य को सप्रमाण स्पष्ट करते हैं; यथा–

(1) सुरासुराधीशशिखान्तशायिनः– सुराणाम् अमराणाम् अमराःनिर्जरास्त्रिदशा विबुधाः सुरा..... इत्यमरः।

(2). शिखा दृ शिखा चूडा शिरस्यापि इति वैजयन्ती।

(3) भवच्छिदः – भवः क्षेमेशसंसारे सत्तायां प्राप्ति जन्मनोरू इति मेदिनी।

(4) पादपांसवः – पांसुः क्षोदो रेणुश्चूर्णं धूली रजश्च तुल्यार्थाः इति हलायुधः।

रामायण, महाभारत तथा पुराणादि के प्रसङ्गों का उपबृंहण करते हुए 'उन्मेषिणी' टीका में उन कथाओं के मूल उत्स का भी टीकाकार द्वारा संकेत किया गया है। यद्यपि यहाँ टीका में तत्तद् प्रसङ्गों को उपन्यस्त किया गया है तथापि यदि पाठक विशेष को और अधिक जानने का उत्साह अथवा जिज्ञासा है तो प्रसङ्ग विशेष में संकेतित ग्रन्थ का अभिधान उनके लिए उपकारी होगाद्य उदाहरणार्थ–विन्ध्याटवी वर्णन के प्रसङ्ग में दृ 'दण्डकारण्यन्तःपाति' पद से सम्बन्धित कथानक को उपन्यस्त करते हुए टीकाकार द्वारा "इति रामायणीयःउदन्तः" लिखकर आधारग्रन्थ का संकेत किया गया है। इसी प्रकार 'विन्ध्यगिरिणानुलङ्घिता आज्ञा' से सम्बन्धित कथानक का वर्णन करते हुए टीकाकार द्वारा "इति स्कन्दपुराणस्य काशीखण्डे" संकेत किया गया है।

आज जिन प्रतियोगी परीक्षाओं में कादम्बरी ग्रन्थ पाठ्यक्रम के रूप में निर्धारित है उन परीक्षाओं में प्रायः प्रतियोगियों से ग्रन्थ के सटीक अनुवाद ज्ञान के साथ व्याकरणज्ञान के अन्तर्गत समास,पद–निर्वचन तथा व्युत्पत्ति आदि की अपेक्षा की जाती है। टीकाकार द्वारा इस तथ्य का विशेष ध्यान रखा गया है कि विद्यार्थियों के मध्य कादम्बरी ग्रन्थ का सटीक अनुवाद और प्रत्ययादि सम्बन्धी प्रमाणित ज्ञान ही पहुँचे। एक भाषा का दूसरी भाषा में सटीक अनुवाद करना क्लिष्ट कार्य है क्योंकि प्रत्येक भाषा की अपनी कुछ निजी विशेषताएँ होती हैं जो उस भाषा के भावों को अन्य भाषा में पूर्णरूप से जीवित रखते हुए रुपान्तरण में बाधक होती हैं। इस बात का विशेष ध्यान रखते हुए टीकाकार द्वारा कादम्बरी के अनुवादग्रन्थों की न्यूनता को हरण करने का उपक्रम किया गया है।

'अनन्तशास्त्रं बहुलाश्च विद्या' अर्थात् शास्त्रों का ज्ञान अनन्त है तथा विद्याएं अपरिमित हैं; अतः इस शास्त्रसागर में गोता लगाने वाला विद्वान स्वेच्छानुसार किन्तु अपनी क्षमतानुसार रत्नों की प्राप्ति करता है। संस्कृत जगत में "मुण्डे–मुण्डे मतिर्भिन्ना कुण्डे–कुण्डे नवं पयः" तथा 'वादे वादे जायते तत्त्वबोधः' उक्तियां अत्यन्त प्रसिद्ध हैं। अतः टीकाकार का जहाँ भी अन्य टीकाकारों से वैमत्य है अथवा व्याकरणादि से सम्बन्धित व्युत्पत्तियों तथा निर्वचनादि में मत वैभिन्य हैं, वहाँ टीकाकार एक विनयी विद्वान की भाँति 'एतच्चिन्त्यम्' लिखकर ग्रन्थ में आगे बढ़ते हैं; जिससे पाठकों के समक्ष शास्त्रार्थ बोध में बाधक वितण्डादि का बोझिलपन नहीं उपस्थित होता है।

गूढ़ से गूढ अर्थ को पाठकों तक पहुँचाना तथा गूढार्थ का सर्वांगप्रकाशन, 'उन्मेषिणी' की विशेषताओं में अन्यतम् है;यथा– बिन्दुमती, प्रहेलिकादि को सोदाहरण व्याख्यायित किया गया है–

1. बिन्दुमती–पद्यवर्णसंख्यया बिन्दुमात्रस्थापनेन तत्तद्वर्णोपलब्धिर्बिन्दुमती। यथा–.....
2. गूढेति–गूढःनिलीनःचतुर्थः तुरीयःपादःचरणःयस्मिन्सःप्रथमपाद त्रय एव चतुर्थपादस्याक्षरा–गूढाः स गूढचतुर्थपादः। तस्योदाहरणं यथा.....
3. प्रहेलिकेति–श्लेषे सति यत्र विशेष्यस्यानभिधानं सा प्रहेलिका।सा च शाब्दी आर्थीति द्विविधा।उदाहरणमुभयोः.....

टीकाकार को भाषायी परहेज नहीं है, यही कारण है कि उन्होंने भावों के सम्प्रेषणार्थ सरलतम् भाषा में विद्यार्थियों को समझाने का कार्य किया है। भूमिका लेखन में उर्दू के शब्दों का उन्होंने सहज प्रयोग किया है; यथा– आलम। इसके साथ ही अनुवाद में अप्रचलित अथवा अपने अर्थ विशिष्ट से भिन्न रूप में प्रचलित शब्दों के आंग्ल– अनुवाद को टीकाकार द्वारा सहजता से ग्रन्थ में स्थान दिया गया है; यथा– कस्तूरी की सुगन्ध (scent)। जहाँ कहीं एक अव्यय मात्र को रखने से अथवा अनुवाद में एक अतिरिक्त शब्द (जो मूल में नहीं पठित है) को रखने से अनुवाद सरल होता है वहां टीकाकार कोष्ठक में विद्यार्थियों के सौकर्य के लिए वह शब्द लिख देते हैं।

पुस्तक की सूक्ष्म प्रूफ रीडिंग आदि के द्वारा टीका को पूर्ण शुद्ध रखने का श्लाघनीय प्रयास किया गया है तथापि एक या दो स्थानों पर टंकण की असावधानी आदि लघु त्रुटि होना मानवीय स्वभाव है। मुद्रक द्वारा आनेवाले संस्करणों में अनुवाद और मूल पाठ के पृष्ठों का विशेष ध्यान रखते हुए प्रत्येक गद्यखण्ड के समक्ष अथवा अधोभाग में ही अनुवाद समाहित करने का सफल यत्न किया जायेगा ऐसा पूर्ण विश्वास है।

समीक्षक
सौरभ तिवारी(शोधच्छात्र)
संस्कृत तथा प्राकृतभाषा विभाग,
लखनऊ विश्वविद्यालय,लखनऊ।